ध्येय-प्राप्ति का हेतु 'भावना'

☐ डॉ० आदित्य प्रचण्डिया 'दीति'

जिससे आत्मा भावित होती है, वह भावना कहलाती है। चित्तशुद्धि, मोहक्षय तथा अहिंसा-सत्य आदि की वृत्ति को टिकाने के लिए आत्मा में जो विशिष्ट संस्कार जागृत किए जाते हैं, उसे भावना कहते हैं। जिसका जिस प्रकार से जो-जो संवेदन होता है, उसको उसी प्रकार से वैसा ही अनुभव होने लगता है। सदा अमृत रूप में चिन्तन करने से विष भी अमृत बन जाता है। मित्रदृष्टि से देखने पर शत्रु भी मित्र रूप में परिणत हो जाता है। रागद्वेषयुक्त गमन-निरीक्षण-जल्पन आदि जितने भी काम संसार के हेतु हैं, वे ही रागद्वेष रहित हों तो मुक्ति के हेतु बन जाते हैं। प्राणी स्नेह, द्वेष या भय से अपने मन को बुद्धि द्वारा जहाँ-जहाँ लगाता है, मन वैसा ही अर्थात् स्नेही, द्वेषी या भयाकुल बन जाता है।

शरीर के अवयवों का कमाण्डर 'मस्तिष्क' है। उसी प्रकार जीवन की सारी प्रवृत्तियों या क्रियाओं का कमाण्डर 'भाव' है। महाकवि सूरदास के पास आँखें नहीं थीं किन्तु भक्ति-रस के सुन्दर भावों ने उन्हें कविर्मनीषी ही नहीं अपितु सगुण संत बना दिया। अष्टावक्र का शरीर आठ अंगों से टेढ़ा-मेढ़ा और बेडौल था परन्तु अपनी अध्यात्मशैली से वह आदरास्पद हो गए। किसी भी क्रिया के पीछे सद्विचार या शुभभाव का योग होता है तो उसमें माधुर्य आ जाता है। क्रिया को भोजन कहें तो भाव को नमक कह सकते हैं। जीवन की प्रत्येक प्रवृत्ति के साथ शुभ भाव अनिवार्य है। भाव रसायन हैं। थोड़ी सी मात्रा में सेवन किया गया भाव-रसायन आत्मा को बड़े-बड़े रोगों से—काम क्रोधादि से मुक्ति दिलाकर स्वस्थ-सबल बना देता है। क्रिया के साथ डाला गया भावों का थोड़ा सा जामन भी चित्तरूपी पात्र में शुद्ध धर्मसंस्काररूपी दही जमा देता है और तभी उसमें शुभगति अथवा मोक्षरूपी मक्खन प्राप्त किया जा सकता है।

परिणाम ही बन्ध हैं, मोक्ष हैं। परिणाम की धारा ही आत्मा की दशा को नापने-मापने का थर्मामीटर है। यदि परिणाम की धारा अशुभ दिशा की ओर प्रवहमान है तो हमारी आत्मा भी अशुभगामी है। यदि वह शुभ की ओर उन्मुख है तो आत्मा शुभगामी होगी ही। जिसकी जैसे भावना होती है वैसी ही सिद्धि होती है। जैसे तंतु (तार) होते हैं वैसा ही कपड़ा बन जाता है। मन्त्र, तीर्थ, ब्राह्मण, देवता, नैमित्तिक, औषधि और गुरु इन सबमें जिसकी जैसी भावना होती है, प्रायः वैसी ही सिद्धि-फल की प्राप्ति होती है। खुराक के अनुसार गाय-भैंस का दूध होता है। मेह अर्थात् वर्षा के अनुरूप खेती होती है। माल के अनुसार लाभ होता है और भावना के अनुसार पुण्य होता है। मरते समय जो भावना होती है वैसी ही गति मिलती है। हिन्दी कहावत है कि 'दानत जैसी बरकत' अर्थात् जिसकी दानत बुरी, उसके गले छुरी। शायर अकबर कह उठता है—

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

तालीम का शोर इतना, तहजीब का गुल इतना।
बरकत जो नहीं होती नीयत की खराबी है॥

जो आस्रव-कर्मप्रवेश के हेतु हैं, वे भावना की पवित्रता से परिश्रव-कर्म रोकने वाले हो जाते हैं और जो परिस्रव हैं, वे भावना की अपवित्रता से आस्रव हो जाते हैं—यथा—

जे आसवा ते परिस्सवा, जे परिस्सवा ते आसवा। (आचारांग ४।२)

दो किसान बाजरी बोने के लिए खेत जा रहे थे। रास्ते में साधु मिले। पहला उन्हें देखकर खुश हुआ एवं सोचने लगा कि नंगे सिर साधु मिले हैं अतएव इनके सिर जितने बड़े-बड़े सिट्टे होंगे। शकुन बहुत अच्छे हुए हैं। दूसरा साधु को देखकर अपशकुन की कल्पना करने लगा कि इनके सिर पर पगड़ी नहीं है, इसलिए केवल कड़वी होगी, सिट्टे बिल्कुल नहीं होंगे। भावना के अनुसार परिणाम सामने आया। पहले के खेत में खूब बाजरी हुई और दूसरे के खेत में टिड्डियाँ आने से सारे सिट्टे नष्ट हो गए। भाव की सत्यता से जीव विशुद्धि को प्राप्त करता है। विशुद्ध भावना वाला प्राणी अरहंत प्रज्ञप्त धर्म की आराधना में तत्पर होकर पारलौकिक धर्म का आराधक होता है। भावनायोग से शुद्धात्मा संसार में जल पर नाव के समान तैरता है। जैसे अनुकूल पवन का सहारा मिलने से नाव पार पहुँचती है उसी प्रकार शुद्धात्मा संसार से पार पहुँचता है—यथा—

भावणाजोग-सुद्धप्पा, जले नावा व आहिया।
नावा व तीरसम्पन्ना, सव्वदुक्खा विमुच्चई॥ (सूत्रकृतांग १५।५)

आचरण की पवित्रता भावों की शुद्धता पर निर्भर है। जब तक भावों में शुद्धि नहीं हो जाती तब तक जीवन में धर्म नहीं टिक सकता। जो सरल हो जाता है उसी की शुद्धि होती है और जो भावों से शुद्ध होता है, उसी में शुद्ध धर्म ठहर सकता है। जिस प्रकार मेज की सफाई के लिए साफ कपड़े की जरूरत होती है उसी प्रकार जीवन या हृदय की स्वच्छता, शुद्धि के लिए भी शुद्ध भाव रूपी कपड़े की आवश्यकता स्वाभाविक है। यदि हमारे भाव शुद्ध हैं तो हमारा आचरण या कर्म भी शुद्ध होगा क्योंकि आचरण या कर्म ही तो भावों की छाया है। भाव बीज है तो आचरण उसका फल है। शुद्ध भावों के संकल्प आसपास के वातावरण को भी शुद्ध बना देते हैं। तालाब में कंकर फेंकने से लहरें उठती हैं और एक के बाद दूसरी को जन्म देती हुई तट तक पहुँच जाती हैं उसी प्रकार शुभ भावों की लहरें भी समाज रूपी सरोवर में अपने सदृश लहरों को जन्म देती हुई समाज के एक सिरे से दूसरे सिरे तक पहुँच जाती हैं। तीर्थंकरों की धर्मसभा 'समवसरण' में सिंह और बकरी पास-पास बैठते हैं। कारण ? पवित्रता की प्रतिमूर्ति व्यक्ति के शुद्धभावों का प्रभाव। व्यक्ति के भावों में जितनी अधिक शुद्धता होगी जन-जन के मन पर उतनी ही प्रभावना अंकित होगी।

भावों के विनिमय में सतर्कता अपेक्षित है। अन्यथा असद्भावों के घने चक्कर में फँस कर व्यक्ति अपनी अर्जित पुण्य रूपी पूँजी गँवा देता है। असल में असद्भाव चाण्डाल है। शास्त्र में नाम, स्थापना, द्रव्य और भाव ये चार प्रकार के चाण्डाल कहे गए हैं। नाम चाण्डाल और स्थापना चाण्डाल हमारा उतना नुकसान नहीं करते जितना द्रव्यचाण्डाल अर्थात् खोटे कृत्य वाला और भावचाण्डाल अर्थात् खोटे या निंद्य कर्मों की ओर प्रेरित करने वाला, करते हैं। भाव जब चाण्डाल बन जाता है तो हमारी आत्मा को अधोगति में ले जाता है।

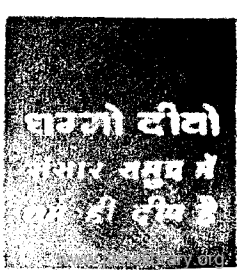

Jain Education International For Private & Personal Use Only

आध्यात्मिक क्षेत्र में भावों की शुद्धि अनिवार्य मानी गई है। यदि आप आत्मा के राज्य में पहुँचना चाहते हैं, विषय-कषायों का शमन करके, आधि-व्याधि-उपाधि को पार कर केवलज्ञान और मुक्ति पाना चाहते हैं तो आपको सर्वप्रथम भावों, अध्यवसायों, परिणामों की शुद्धि करनी ही होगी। भावों की शुद्धि के बिना ध्यान, दान, तप, जप, सब सार्थ नहीं हो सकेंगे। भावों की शुद्धि सतत रहे, तांता टूटे नहीं। इसके लिए दो उपाय हैं—एक तो अभ्यास और दूसरा वैराग्य। अभ्यास और वैराग्य के लिए आलम्बन की जरूरत होती है। अनुप्रेक्षाएँ और भावनाएँ क्रमशः वैराग्य और अभ्यास के मुख्याधार हैं। इनके परिशीलन, चिन्तन, मनन से आत्मा का उत्कर्ष सम्भव है। ध्येय अर्थात् मोक्ष की प्राप्ति सहज हो सकती है।

आवशुद्धि के लिए आचार्य अमितगति सूरि ने सामायिक पाठ में भावनाओं के चार प्रकार बताएँ हैं—यथा—

सत्वेषु मैत्रीं, गुणिषु प्रमोदं, क्लिष्टेषु जीवेषु कृपापरत्वम्।
माध्यस्थ्यभावं विपरीतवृत्तौ, सदा ममात्मा विदधातु देव॥

अर्थात् हे प्रभो! मेरी यह आत्मा प्राणिमात्र के प्रति सदैव मैत्रीभावना, गुणीजनों के प्रति प्रमोदभावना, दुःखी जीवों पर करुणा भावना और विपरीत वृत्ति वालों पर माध्यस्थ्य भावना रखे। इस प्रकार मैत्री, प्रमोद, करुणा और माध्यस्थ्य इन चारों भावनाओं का अभ्यास जीवन में सक्रियता, सजगता लाता है। 'मेरी भावना' नामक प्रसिद्ध कृति में पंडित जुगलकिशोर मुख्त्यार द्वारा इन चारों भावनाओं का सुन्दर-सरल निरूपण हुआ है—यथा—

मैत्री भाव जगत में मेरा सब जीवों से नित्य रहे।
दीन दुःखी जीवों पर मेरे उर से करुणा स्रोत बहे॥
दुर्जन, क्रूर, कुमार्गरतों पर क्षोभ नहीं मुझको आवे।
साम्यभाव रखूँ मैं उन पर ऐसी परिणति हो जावे॥
गुणीजनों को देख हृदय में मेरे प्रेम उमड़ आवे।
बने जहाँ तक उनकी सेवा करके यह मन सुख पावे॥

पातंजल-योगदर्शन में भी इन चारों भावनाओं का सुफल द्रष्टव्य है—"सुख-दुःख-पुण्यापुण्यानां मैत्री-करुणा मुदितोपेक्षाभावनातश्चित्तप्रसादनम्।" अर्थात् मैत्री, करुणा, मुदिता और उपेक्षा इन चारों भावनाओं से क्रमशः सुखी दुःखी, पुण्यवान् और पुण्यहीन के चित्त को प्रसन्न किया जा सकता है। अपना चित्त भी भावशुद्धि और सद्गुण वृद्धि से प्रसन्न होता है। बौद्ध धर्म में भी इन चारों भावनाओं में रमण करने को 'ब्रह्मविहार' अर्थात् शुद्धात्मा में विचरण की संज्ञा दी गई है। वस्तुतः जीवन में इन चारों भावनाओं के प्रयोग से तथा सतत अभ्यास से साधक बंकिम मार्ग से हटकर समता के प्रशस्त पथ पर आरूढ़ हो जाता है।

भावना का एक नाम अनुप्रेक्षा है। ध्येय के अनुकूल गहरा चिन्तन, अवलोकन अनुप्रेक्षा कहलाता है। अनुप्रेक्षा से अनुप्राणित ध्याता वस्तुस्वरूप का चिन्तन करके अपने स्वभाव-स्वरूप में स्थिर रहता है। इष्टवियोग और अनिष्टसंयोग में सहिष्णुता और धैर्य का जाम पीते हुए वह सम रहता है तथा किसी भय और प्रलोभन के कारण धर्मपथ से च्युत नहीं

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

होता है। आध्यात्मिक विकास में अनित्य, अन्यत्व, अशरण, अशुचि, आस्रव, एकत्व, धर्म, निर्जरा, बोधिदुर्लभ, लोक, संवर और संसार—बारह प्रकार की अनुप्रेक्षाएँ परम सहायक हैं।

कविवर मंगतराय इन अनुप्रेक्षाओं के चिन्तवन, मनन से संसार-सागर तरने की बात कहते हैं—यथा—

मोहनींद से उठ रे चेतन, तुझे जगावन को।
हो दयाल उपदेश करैं गुरु, बारह भावन को॥
इनका चिन्तवन बार-बार कर श्रद्धा उर धरना।
मंगत इसी जतन तें इक दिन, भव सागर तरना॥

भक्तकवि भूधरदास ने बारह भावनाओं को संक्षिप्त लेकिन सरल सारगर्भित रूप में दोहा, सोरठा छन्द में शब्दित किया है जो बाल, वृद्ध, युवा सभी के लिए चिन्तन-मनन करने योग्य हैं—

अनित्यभावना

राजा राणा छत्रपति, हाथिन के असवार।
मरना सबको एक दिन, अपनी-अपनी बार॥

अशरणभावना

दल बल देई देवता, मात पिता परिवार।
मरती विरियाँ जीव को, कोई न राखनहार॥

संसारभावना

दाम बिना निर्धन दुखी, तृष्णावश धनवान।
कहूं न सुख संसार में, सब जग देख्यो छान॥

एकत्वभावना

आप अकेला अवतरै, मरै अकेला होय।
यूं कबहूं इस जीव को, साथी सगा न कोय॥

अन्यत्वभावना

जहाँ देह अपनी नहीं, तहाँ न अपना कोय।
घर सम्पति पर प्रकट ये, पर हैं परिजन लोय॥

अशुचिभावना

दिपै चाम-चादर मढ़ी, हाड़ पींजरा देह।
भीतर या सम जगत में, अवर नहीं घिन गेह॥

आस्रवभावना

मोह-नींद के जोर, जगवासी घूमै सदा।
कर्म चोर चहुं ओर, सरवस लूटै सुध नहीं॥

संवरभावना

सतगुरु देय जगाय, मोहनींद जब उपशमैं।
तब कछु बनैं उपाय, कर्म चोर आवत रुकैं॥

धम्मो दीवो
संसार समुद्र में
धर्म ही दीप है

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

ज्ञान-दीप तप-तेलभर, घर शोधै भ्रम छोर।
या विध विन निकसै नहीं, बैठे पूरब चोर॥

निर्जराभावना

पंच महाव्रत संचरण, समिति पंच परकार।
प्रबल पंच इन्द्री-विजय, धार निर्जरा सार॥

लोकभावना

चौदह राजु उतंग नभ, लोक पुरुष-संठान।
तामें जीव अनादि तैं, भरमत हैं बिन-ज्ञान॥

बोधिदुर्लभभावना

धन कन कंचन राज सुख, सबहि सुलभ कर जान।
दुर्लभ है संसार में, एक जथारथ ज्ञान॥

धर्मभावना

जाचे सुर तरु देय सुख, चिंतत चिंतारैन।
बिन जाचै बिन चिंतये, धर्म सकल सुख दैन॥

इन द्वादश भावनाओं के निरन्तर अभ्यास करने से पुरुषों के हृदय में कषाय रूप अग्नि बुझ जाती है तथा परद्रव्यों के प्रति राग भाव गल जाता है और अज्ञानरूपी अन्धकार का विलय होकर ज्ञानरूप दीप का प्रकाश हो जाता है।

दान धन से दिया जाता है। शील सत्त्व से पाला जाता है, तप भी कष्ट से तपा जाता है किन्तु उत्तमभावना स्वतन्त्र है। भगवान् न तो काष्ठ में है, न पत्थर में है और न मिट्टी में है। भगवान् का निवास पवित्र भावना में है अतएव भगवत्प्राप्ति का मुख्य हेतु भावना है। अज्ञ 'नमो विष्णोय' कहता है और विज्ञ 'नमो विष्णवे' कहता है लेकिन दोनों को समान पुण्य होता है। क्योंकि विष्णुभगवान् भावना के भूखे हैं। इस प्रकार इन भावनाओं, अनुप्रेक्षाओं के द्वारा भावों की शुद्धि और शुभभावों में एकाग्रता होती है। वस्तुतः भावों की शुद्धि से आत्मशुद्धि होती है और आत्मशुद्धि से ध्येय की प्राप्ति सम्भव है।

—मंगलकलश, ३९४, सर्वोदयनगर, आगरारोड,
अलीगढ़-२०२००१ (उ०प्र०)

□□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org